ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.19, No.2, April – June,2024/59

''धर्म एवं आध्यात्मिकता के आलोक में मूल्य शिक्षा''

पवन कुमार सिंह, शोधछात्र–शिक्षाशास्त्र विभाग, डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या।
डॉ0 मो0 उस्मान, शोध निर्देशक–एसो0प्रोफे0–शिक्षा संकाय, किसान पी0जी0 कालेज, बहराइच।
https://doi.org/10.61410/had.v19i2.191

शोध सारांश

धर्मजीवन का अभिन्न अंग है। मानव चिन्तन के विभिन्न आयाम भी धर्म से ही निकलते हैं। यह स्वाभाविक है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने देश की धर्म एवं संस्कृति के विकास के विषय में ज्ञान प्राप्त करना चाहता है। इसी स्वाभाविक प्रक्रिया का परिणाम भारतीय धार्मिक चेतना एवं आध्याम्किता के परिशीलन में मूल्य आधारित शिक्षा का परिशीलन अनेक रूपों में हमारे आस–पास के पर्यावरण में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। धर्म की वास्तविक परिप्रेक्ष्य उसके मनोविज्ञान का, उसके बाह्य एवं आन्तरिक धरातल का ज्ञान न होना है। धर्म आदिम या आध्यात्मिक शक्ति में विश्वास है। भय एवं आश्चर्य से पैदा हुआ धर्म आज सम्पूर्ण मानव जगत में व्याप्त है। धर्म के समग्र एवं वास्तविक परिप्रेक्ष्य का ज्ञान हमें मूल्य आधारित शिक्षा से ही प्राप्त होता है।

अध्यात्मक व्यक्ति के आत्म स्वरूप की अनुभूति कराता है, अहंकार का विसर्जन भी करता है। यह सहज भाव से जीवन जीना भी सिखाता है। सम्पूर्ण प्रकृति सहज है, मात्र व्यक्ति ही असहज है। मानव जैसा है वैसा नहीं दिखता और जैसा दिखता है वैसा नहीं। अन्दर और बाहर अलग–अलग स्वरूप है। बाह्य एवं आन्तरिक भेद ही असहजता का कारक है जहाँ अहंकार है वहीं भेद है। इसी अहंकार को सहजता में विलय का माध्य है मूल्य शिक्षा।

शब्द संकेत – अध्यात्म, परिशीलन, धार्मिक चेतना, रक्षित, अनुप्राणित, नवोदित परिलक्षित, परम्परावादी मूल्य, आदर्श, विसंगतियाँ, अनास्था।

शोध–पत्र

इतिहास इस बात का साक्षी है कि मानव का धर्म से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहा है। मनुष्य जीवन का प्रत्येक पक्ष धर्म से अनुप्राणित रहा है। आस्था एवं विश्वास मनुष्य की धार्मिक चेतना का प्रमुख आधार है। धार्मिक चेतना व शक्ति है जो मानव को धर्म की ओर अग्रसर करती है। वही शिक्षा धार्मिक सत्ता के प्रति विश्वास एवं आस्था पैदा करता है। धर्म में भावना, ज्ञान एवं क्रिया तीनों विद्यमान रहते हैं। इसीलिए धर्म को मानव–मन की प्रतिक्रिया कहा गया है।[1]

शिक्षा के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति अपनी शारीरिक, बौद्धिक एवं आयात्मिक शक्तियों का विकास कर इस संसार में एवं परलोक में जीवन के वास्तविक सुख को प्राप्त कर सकता था।[2] वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी के लिए ऋग्वेद में ब्रह्मचारी शब्द का प्रयोग किया गया है।[3] शिक्षा प्राप्त करने में आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक जीवन मूल्यों से सम्बन्धित सुसंस्कत मनुष्य की कल्पना ही मानवीय आदर्शों से युक्त शिक्षा–दर्शन का उद्देश्य था। राधा कुमुद मुखर्जी ने गुरू और शिष्य के सम्बन्धों को पिता–पुत्र की भाँति कहा है।[4] स्मृतियों में शिक्षा के उद्देश्य का निरूपण किया गया है। शिक्षा ज्ञानोदय की प्रक्रिया समझी जाती थी। इसके द्वारा व्यक्ति अपनी भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही प्रकार की उन्नति कर सकता था। महाभारत के अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मनुष्य में धार्मिक प्रवृत्ति में वृद्धि करना था।[5]

भारतीय शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य धार्मिक भावना का जागरण था। बालक का मस्तिष्क बड़ा ही लचीला होता है, जो भाव उसके मन में इस समय बैझा दिया जाता है, वह आजीवन के लिए बैठ जाता है। प्राचीन शिक्षा में यह स्पष्ट किया गया है कि धर्म ही आहत होने पर मनुष्य को मृत्यु तक पहुँचता है और वही रक्षित होने पर सबकी रक्षा भी करता है। धर्म के माध्यम से कृषिगण इस भवसागर को पार कर पाते है। सम्पूर्ण वैश्विक धरातल धर्म के आधार पर ही टिका है।[6]

भारतीय शिक्षा का धर्म के साथ अभिन्न सम्बन्ध रहा है। धर्म विहीन शिक्षा को विष के समान माना गया था।[7] यही कारण है कि जीवन के विभिन्न पड़ाव पर धर्म ही शिक्षा का आधार बना रहा।[8] युवा ब्रह्मचारी को धर्म की भावनाओं से अनुप्राणित करने के लिए ही संस्कारों एवं व्रतों के पालन का विधान बनाया गया था। उस समय आध्यात्मिक प्रकाश से रहित शिक्षा को शिक्षा की मान्यता नहीं प्राप्त थी।[9] भोज–प्रबन्ध में स्पष्ट किया गया है कि धर्म से विमुख मनुष्य बलवान होकर भी असमर्थ, ज्ञानी होकर भी मूख और धनवान होते हुए भी निर्धन कहलाता था।[10]

प्राचीन भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों में विद्यार्थियों को ग्रन्थों के साथ–साथ उन्हें चरित्रवान होने की दिशा में अग्रसर किया जाता था। उन्हें परिश्रमशील, संयमी एवं उद्यमी बनाया जाता था और उसमें आत्मसम्मान, आत्मविश्वास तथा आत्मनिर्भरता की भावना का विकास भी किया जाता था।[11]

शिक्षा मनुष्य की प्रवृति को मुक्त करने के लिए है। वास्तव में शिक्षा ज्ञान के प्रचार प्रसार और हमारी जीवन–शैली को तरासने का एक माध्यम है और इसका उद्देश्य हमारी एक पीढ़ी का भविष्य में आने वाली जटिल चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करना है। यह सर्वविदित है कि इस देश के सुनहरें भविष्य के कर्णधार एवं हमारी पुष्पवाटिका के नवोदित कोमल–कुसुम तरूणों कन्धों पर ही हमारा परम्परागत धर्म, दर्शन, संस्कृति, साहित्य, शौर्य एवं पराक्रम से परिपूर्ण इतिहास के अमूल्य वैभव की सुरक्षा तथा तदनुरूप आचरण करने की वास्तविक दायित्व भी है तभी हमारी शिक्षा व्यवस्था मूल्य आधारित शिक्षा का आदर्श स्थापित कर पायेगी।[12]

विद्यालय एक सामाजिक संस्था है जहाँ समाज की आवश्यकताओं के अनुसार व्यक्ति का निर्माण होता है। विद्यालय से निकलकर व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साथ ही सामाजिक दायित्वों एवं कर्त्तव्यों की पूति करता है। भारतीय समाज विभिन्नताओं वाला देश है। जहाँ सामाजिक आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक इत्यादि सभी विभिन्नता विद्यमान रहा है, किन्तु इसके दूसरे पक्ष पर दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि परम्परावादी मूल्यों से हमारा सम्बन्ध आज भी अटूट बना हुआ है। जबकि आधुनिक मूल्यों की भी स्वीकारोक्ति समाज में बनी हुई है। मानवीय मूल्यों की छाप हमारे प्राचीन ग्रन्थों यथा–वेद, पुराण, उपनिषद, गीता, कुरान, बाइबिल से हमें संस्कार, सभ्यता, सहिष्णुता सहनशीलनता जैसे आदर्शों की शिक्षा प्राप्त होती है। इस आदर्शों पर चलने वाला व्यक्ति अपने नैतिक मूल्यों से कभी भी विचलित नहीं हो सकता है। इन्हीं शैक्षिक मूल्यों से ही समाज को शक्ति प्राप्त होती है।[13]

अध्ययन का उद्देश्य

वर्तमान शिक्षा की स्थिति नाविक विहीन एवं पतवार वहीन नौका के समान है, जो अथाह सागर में लक्ष्यविहीन एवं दिशा विहीन होकर मात्र हवा एवंज ल के थपेड़ों से इधर–उधर भटकता सा प्रतीत होता है। किन्तु उसका कोई लक्ष्य नहीं है, किनारे पहुँचने का कोई निर्धारित एवं स्थान नहीं है। उसी प्रकार आधुनिक परिवेश की शिक्षा व्यवस्था भी लक्ष्य–विहीन, दर्शन विहीन होकर अनुपयोगी सिद्ध हो रही है। यही कारण है कि आज समाज में अनेकानेक विसंगतियों तथा भ्रष्टाचार, धनलोलुपता,

बाह्स आडम्बर राष्ट्र एवं जीवन के प्रति अनास्था वास्तविक रूप से परिलक्षित होती है। शिक्षा के सुधार का प्रारम्भ वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भी रूपान्तरित करना होगा। भारतीय शिक्षा के लिए भारतीय भवभूमि एवं परिस्थितियों के लिए भारतीय मनीषियों, चिंतकों एवं दार्शनिकों को शिक्षा में स्थान प्रदान करना होगा।

वैश्वीकरण के इस युग में विश्व के चिंतकों के चिन्तन पर भी दृष्टिपात करना पड़ेगा। साथ ही बदलते वैश्विक परिदृश्य में प्रत्येक व्यक्ति के भीतर वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना पड़ेगा। तभी शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित किया जा सकता है। इसी को दृष्टि में रखकर प्रस्तुत शोध अध्ययन में उद्देश्यों का चयन किा गया है।

1. मण्डल अयोध्या के शैक्षिक परिदृश्य पर प्रकाश डालना।
2. शोध अध्ययन की प्रासंगिकता का उल्लेख करना।
3. धार्मिक एवं आध्यात्मिकता के आलोक में मूल्य शिक्षा की अवधारणा का विश्लेषण करना।
4. वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षा का विश्लेषण करना।
5. अयोध्या मण्डल के संस्कृति विद्यालयों के शिक्षा में स्वरूप का विवेचन करना।
6. अयोध्या मण्डल के मुस्लिम विद्यालयी शिक्षा के स्वरूप का विवेचन करना।
7. अयोध्या मण्डल संस्कृत तथा मुस्लिम विद्यालयी शिक्षा के महत्ता को बतलाते हुए उनकी साम्प्रतिक सम्भावनाओं का उल्लेख करना।

शोध–पद्धति

दार्शनिक अनुसंधान की पद्धति सर्वाधिक मौलिक एवं प्राचीनतम है। जिस प्रकार अनुसंधान सत्य का अन्वेषण करता है, उसी प्रकार से दर्शन के माध्यम से जीवन और जगत के तत्वों का विवेचन करके सत्य तक पहुँचने का प्रयास किया जा सकता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में आवश्यकतानुसार सांख्यिकीय विश्लेषण करते हुए ऐतिहासिक अनुसंधान पद्धति का उपयोग किया जायेगा। अयोध्या मण्डल के संस्कृत विद्यालयों एवं मुस्लिम विद्यालयी शिक्षा स्वरूप का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु समालोचनात्मक विश्लेषण, दशा–सर्वेक्षण, विवरणात्मक इत्यादि विधियों का भी आवश्यकतानुसार प्रयोग किया गया है।

निष्कर्ष –

अतः वर्तमान शिक्षा प्रणाली की शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति की खोखली सम्भावनाओं, उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों तथा उद्देश्यविहीनता की स्थिति में अब यह अपरिहार्य सा प्रतीत होता है कि प्राचीन शिक्षा पद्धति के धार्मिक व आध्यात्मिक पक्षों की प्रासंगिकता पर पुनः विचार करते हुए मूल्य आधारित शिक्षा की ओर पुनः अग्रसर होने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

सन्दर्भ सूची –

1. सिंह, रविनन्दन ; भारतीय धार्मिक चेतना के आयाम, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0–13
2. ऋग्वेद ; 10, 717
3. वही ; 10, 109, 5
4. अल्तेकर, ए0एस0 ; एन्सियन्ट इण्डियन एजूकेशन, पृ0–101
5. महाभारत ; 12/321/78
6. अथर्ववेद ; 11/7/19

7. विष्णु पुराण ; 6/5/6/2
8. भोज प्रबन्ध ; 41, 34
9. महाभारत 12/321/78
10. कादम्बरी पृ0–110, 111
11. वाटर्स ह्वेनसांग, पृ0–3, 6, 163
12. सिंह, रविनन्दन ; भारतीय धार्मिक चेतना के आयाम, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0–01
13. मिश्रा, अवधेश चन्द्र एवं डॉ0 प्रेमलता ; सामाजिक मूल्यों का संकट, लक्ष्मी प्रकाशन दिल्ली, पृ0–55